ISSN: 2319 – 8753
International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

सत्ता का विकेंद्रीकरण और गांधी समकालीन भारतीय लोकतंत्र में आवश्यक

डॉ. गणपत राम सुथार

सह-आचार्य, राजनीति विज्ञान, एसबीके राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जैसलमेर

सार

भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को सुविधाजनक बनाने के लिये **73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियमों** को पारित किये हुए लगभग 30 वर्ष हो गए हैं, लेकिन इस दिशा में वास्तविक प्रगति बहुत कम हुई है। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण **राज्य के संसाधनों और कार्यों पर अधिकार को केंद्र से निचले स्तरों पर निर्वाचित अधिकारियों को स्थानांतरित करने** की प्रक्रिया है ताकि शासन में अधिक प्रत्यक्ष नागरिक भागीदारी को प्रोत्साहित किया जा सके।भारतीय संविधान द्वारा परिकल्पित हस्तांतरण केवल प्रत्योजन नहीं है।इसका तात्पर्य यह है कि **निर्धारित शासनिक कार्यों को कानून द्वारा औपचारिक रूप से स्थानीय सरकारों को सौंपा जाता** है, वित्तीय अनुदान और कर संबंधी उचित अंतरण द्वारा उनकी सहायता की जाती है तथा कर्मचारियों की सुविधा प्रदान की जाती है ताकि उनके पास अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने के लिये आवश्यक साधन हों। **स्थानीय सरकार, जिसमे पंचायत भी शामिल हैं, संविधान के अनुसार राज्य का विषय है,** परिणामस्वरूप पंचायतों को शक्ति और अधिकार का हस्तांतरण राज्यों के विवेक पर छोड़ दिया गया है।**संविधान कहता है कि पंचायतों और नगरपालिकाओं को हर पाँच साल में चुना जाएगा** तथा राज्यों को कानून के माध्यम से कार्यों एवं ज़िम्मेदारियों को हस्तांतरित करने का आदेश दिया जाएगा।भारत में संवैधानिक रूप से **पंचायती राज संस्थानों (PRIs)** की स्थापना करके **73 वें और 74वें संशोधनों** ने पंचायतों एवं नगरपालिकाओं को निर्वाचित स्थानीय सरकारों के रूप में स्थापित करना अनिवार्य कर दिया।इन संशोधनों के द्वारा संविधान में दो नए भाग जोड़े गए, अर्थात् भाग IX शीर्षक "पंचायत" (73 वें संशोधन द्वारा) और भाग IXA शीर्षक "नगर पालिका" (74 वें संशोधन द्वारा जोड़ा गया)।11वीं अनुसूची में पंचायतों की शक्तियाँ, अधिकार और ज़िम्मेदारियाँ शामिल हैं।12वीं अनुसूची में नगर पालिकाओं की शक्तियाँ, अधिकार और ज़िम्मेदारियाँ शामिल हैं।अनुच्छेद 40: ग्राम पंचायत का गठन

परिचय

73वें संशोधन अधिनियम के लागू होने के बाद से **निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों का अनुपात लगातार बढ़** रहा है।वर्तमान में भारत में **1 मिलियन निर्वाचित प्रतिनिधियों के साथ 260,512 पंचायतें हैं, जिनमें 1.3 मिलियन महिलाएँ** हैं।जबकि **संसद और राज्य विधानसभाओं में** महिलाओं का **प्रतिनिधित्व केवल 7-8% है।** निर्वाचित स्थानीय प्रतिनिधियों में से 49% (ओडिशा जैसे राज्यों में यह 50% को पार कर गया है) महिलाएँ हैं।73वें और 74वें संशोधनों के पारित होने से **हस्तांतरण (3 एफ: कोष, कार्य और पदाधिकारी) के संबंध में विभिन्न राज्यों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा पैदा हुई है।केरल ने अपने 29 कार्य पंचायतों को हस्तांतरित कर दिये हैं।**केरल से प्रेरित राजस्थान ने स्वास्थ्य, शिक्षा, महिला और कृषि जैसे कई प्रमुख विभाग पंचायती राज संस्थानों (PRI) को हस्तांतरित किये हैं।इसी तरह बिहार ने "पंचायत सरकार" के विचार को प्रस्तुत किया है और ओडिशा जैसे राज्यों ने महिलाओं के लिये 50% सीटें बढ़ाई हैं।

अपर्याप्त निधि: स्थानीय सरकारों को दिया जाने वाला धन उनकी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये अपर्याप्त होता है।कई प्रकार की शर्तें धन के उपयोग को बाधित करती हैं, जिसमें **आवंटित बजट खर्च करने में अनम्यता भी शामिल है।**स्थानीय सरकारों की अपने स्वयं के करऔर उपयोगकर्त्ता शुल्कों को बढ़ाने के लिये निवेश क्षमता बहुत कम है।छ ग्राम पंचायतों (GPs) के पास अपना भवन नहीं है और **वे स्कूलों, आँगनवाड़ी केंद्रों तथा अन्य स्थानों के साथ जगह साझा** करते हैं।कुछ के पास अपना भवन है लेकिन **शौचालय, पेयजल और बिजली कनेक्शन जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव है।ग्राम पंचायतों में इंटरनेट कनेक्शन** होने के बावजूद कई मामलों में वे काम नहीं कर रहे हैं। किसी भी डेटा प्रविष्टि उद्देश्यों के लिये **पंचायत अधिकारियों को ब्लॉक विकास कार्यालयों का दौरा करना पड़ता है जिससे काम में देरी होती है।**स्थानीय सरकारों के पास **बुनियादी कार्य करने के लिये भी कर्मचारी नहीं हैं।**इसके अलावा अधिकांश **कर्मचारियों को उच्च स्तर के विभागों द्वारा काम पर रखा जाता** है, जिनको स्थानीय सरकारों में प्रतिनियुक्ति पर रखा जाता है, इसलिये वे ज़िम्मेदारी महसूस नहीं करते हैं और एकीकृत विभागीय प्रणाली के हिस्से के रूप में कार्य करते हैं।राज्य अक्सर चुनावों को स्थगित कर देते हैं और स्थानीय सरकारों के लिये पंचवर्षीय चुनावों के संवैधानिक जनादेश का उल्लंघन करते हैं।स्थानीय सरकारें **स्थानीय विकास के लिये नीति बनाने वाले निकाय के बजाय केवल कार्यान्वयन मशीनरी के रूप में कार्य कर रही हैं।** प्रौद्योगिकी-सक्षम योजनाओं ने उनकी भूमिका को और कम कर दिया है।आपराधिक तत्त्व और ठेकेदार स्थानीय **सरकार के चुनावों की ओर आकर्षित होते हैं,** जो

अपने पास उपलब्ध अत्यधिक धन के कारण जनता को लुभाते हैं। इस प्रकार भ्रष्टाचार की श्रृंखला का निर्माण होता है, जिसमें सभी स्तरों पर निर्वाचित प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों के बीच भागीदारी शामिल होती है।हालाँकि यह साबित करने के लिये कोई सबूत नहीं है कि विकेंद्रीकरण के कारण भ्रष्टाचार बढ़ा है।[1,2]

विचार-विमर्श

शहरी क्षेत्रों में **ग्राम सभाओं और वार्ड समितियों को वास्तविक रूप में लोगों की भागीदारी के उद्देश्य** को प्राप्त करने के लिये पुनर्जीवित करना होगा।पर्याप्त जनशक्ति के साथ **स्थानीय सरकार के संगठनात्मक ढाँचे को मज़बूत करना होगा।**पंचायतों के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करने के लिये सहायक और तकनीकी कर्मचारियों की भर्ती तथा नियुक्ति के लिये गंभीर प्रयास किये जाने चाहिये।स्थानीय स्तर पर कराधान के लिये एक **व्यापक तंत्र तैयार किया जाना चाहिये। स्थानीय कराधान के बिना ग्राम पंचायतों को जवाबदेह नहीं ठहराया जा सकता है।**चायती राज मंत्रालय को यह सुनिश्चित करने के लिये **वित्त आयोग के अनुदानों और व्यय की निगरानी करनी चाहिये ताकि अनुदानों की प्राप्ति में देरी न हो।**यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिये कि अनुदानों का उचित और प्रभावी तरीके से उपयोग किया जाए।पंचायतों को भी नियमित रूप से **स्थानीय लेखापरीक्षा के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये ताकि वित्त आयोग के अनुदान के मामले में देरी न हो।** [3,4]भारत में प्रतिवर्ष 24 अप्रैल को लोकतंत्र की नींव के रूप में पंचायती राज दिवस मनाया जाता है। इस वर्ष पंचायती राज दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री द्वारा विभिन्न राज्यों के ग्राम प्रधानों के साथ पंचायती राज के महत्त्व व कोरोना वायरस के रोकथाम में पंचायतों की भूमिका पर चर्चा की गई। पंचायती राज व्यवस्था का विहंगावलोकन करने से ज्ञात होता है कि 24 अप्रैल को पंचायती राज दिवस मनाए जाने का कारण 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम,1992 है जो 24 अप्रैल 1993 से प्रभाव में आया था। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और कोई भी देश, राज्य या संस्था सही मायने में लोकतांत्रिक तभी मानी जा सकती है जब शक्तियों का उपयुक्त विकेंद्रीकरण हो एवं विकास का प्रवाह ऊपरी स्तर से निचले स्तर (Top to Bottom) की ओर होने के बजाय निचले स्तर से ऊपरी स्तर (Bottom to Top) की ओर हो।पंचायती राज व्यवस्था में विकास का प्रवाह निचले स्तर से ऊपरी स्तर की ओर करने के लिये वर्ष 2004 में पंचायती राज को अलग मंत्रालय का दर्ज़ा दिया गया। भारत में पंचायती राज के गठन व उसे सशक्त [5,6] करने की अवधारणा महात्मा गांधी के दर्शन पर आधारित है। गांधी जी के शब्दों में-**"सच्चा लोकतंत्र केंद्र में बैठकर राज्य चलाने वाला नहीं होता, अपितु यह तो गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के सहयोग से चलता है।"** इस आलेख में पंचायती राज व्यवस्था की त्रि-स्तरीय संरचना, उसकी पृष्ठभूमि, विभिन्न समितियाँ तथा लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और पंचायतों के संदर्भ में गांधी दर्शन की उपयोगिता समझने का प्रयास किया जाएगा। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का अर्थ है कि शासन-सत्ता को एक स्थान पर केंद्रित करने के बजाय उसे स्थानीय स्तरों पर विभाजित किया जाए, ताकि आम आदमी की सत्ता में भागीदारी सुनिश्चित हो सके और वह अपने हितों व आवश्यकताओं के अनुरूप शासन-संचालन में अपना योगदान दे सके। स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायती राज की स्थापना लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की अवधारणा को साकार करने के लिये उठाए गए महत्त्वपूर्ण कदमों में से एक थी। वर्ष 1993 में संविधान के 73वें संशोधन द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता मिली थी। इसका उद्देश्य देश की करीब ढाई लाख पंचायतों को अधिक अधिकार प्रदान कर उन्हें सशक्त बनाना था और यह उम्मीद थी कि ग्राम पंचायतें स्थानीय ज़रुरतों के अनुसार योजनाएँ बनाएंगी और उन्हें लागू करेंगी। **'लाॅर्ड रिपन'** को भारत में स्थानीय स्वशासन का जनक माना जाता है। वर्ष 1882 में उन्होंने स्थानीय स्वशासन संबंधी प्रस्ताव दिया जिसे स्थानीय स्वशासन संस्थाओं का **'मैग्नाकार्टा'** कहा जाता है। वर्ष 1919 के भारत शासन अधिनियम के तहत प्रांतों में दोहरे शासन की व्यवस्था की गई तथा स्थानीय स्वशासन को हस्तांतरित विषयों की सूची में रखा गया। स्वतंत्रता के पश्चात् वर्ष 1957 में योजना आयोग (अब नीति आयोग)[7,8] द्वारा **सामुदायिक विकास कार्यक्रम (वर्ष 1952)** और **राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम (वर्ष 1993)** के अध्ययन के लिये 'बलवंत राय मेहता समिति' का गठन किया गया। नवंबर 1957 में समिति ने अपनी रिपोर्ट सौंपी जिसमें त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था- **ग्राम स्तर, मध्यवर्ती स्तर एवं ज़िला स्तर** लागू करने का सुझाव दिया।वर्ष 1958 में राष्ट्रीय विकास परिषद ने बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशें स्वीकार की तथा 2 अक्तूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर ज़िले में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा देश की पहली त्रि-स्तरीय पंचायत का उद्घाटन किया गया।वर्ष 1993 में 73वें व 74वें संविधान संशोधन के माध्यम से भारत में त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्ज़ा प्राप्त हुआ।भारत में त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम पंचायत (ग्राम स्तर पर), पंचायत समिति (मध्यवर्ती स्तर पर) और ज़िला परिषद (ज़िला स्तर पर) शामिल हैं।[9,10]

गाँधी जब राज व्यवस्था पर अपने विचार प्रकट करते हैं तो वे यह सवाल उठाते हैं कि क्या कोई अहिंसक राजनीतिक व्यवस्था भी हो सकती है जो प्रेम के नियम को पुष्ट करती हो? एक ओर जब राज्य को वह शक्तिसंपन्न और हिंसा का संगठित रूप कहते हैं, तब राज्य की क्या कोई दूसरी कल्पना उनके मन में थी, यह देखना बहुत प्रासंगिक है। राज्य जो मूल रूप से हिंसक होता है, जिसकी प्रवृत्ति हिंसा की होती है सामान्यतः राज्य के नागरिक उसे हिंसा के तौर पर नहीं देखते हैं। वस्तुतः उसे उसकी अनिवार्य लागत के तौर पर देखते हैं, क्योंकि राज्य उनके हितों की रक्षा करता है तो उसकी हिंसा को वे चुपचाप सहन करते हैं। इसी तरह संसदीय लोकतंत्र, जिसे लोकतंत्र का एक स्वरूप माना जाता है, क्या वह अपने आप में लोकतंत्र के मूल्यों पर खरा उतरता है? यह सवाल गाँधी बार-बार उठाते हैं कि क्या संसदीय लोकतंत्र में लोगों के हितों को ज्यादा महत्त्व दिया जाता है या दल के हितों को? यह सवाल आज भी प्रासंगिक है।[11,12]

क्या संप्रभुता की कोई अहिंसक अवधारणा हो सकती है? क्या अहिंसक संप्रभुता हो सकती है? क्या केंद्रीकरण, जो राज्य का मूल स्वरूप होता है, क्या वह भी विकेंद्रित राज्य में तब्दील हो सकता है? ऐसे बहुत सारे सवाल हैं जो गाँधी की राजनीतिक दृष्टि में मौजूद हैं। गाँधी उनके विकल्पों पर विचार करते हुए एक विकल्प हम लोगों के सामने प्रस्तुत करते हैं। सामान्यतः राज की अवधारणा एक पिरामिडीय संरचना के तौर पर देखी जाती है जिसमें केंद्र राज्य की शक्ति में केंद्रित होता है और जिसके आधार में लोग रहते हैं। व्यक्तियों के बारे में नीति केंद्र द्वारा बनाई जाती है जहाँ यह आवश्यक नहीं है कि उनसे कोई पूछताछ की जाए या उनसे उनके बारे में कोई जानकारी प्राप्त की जाए। गाँधी इस संरचना का विरोध करते हुए होरिजॉन्टल पावर की बात करते हैं जिसे वह महासागरीय वलय की अवधारणा भी कहते हैं। इस अवधारणा में सत्ता एक केंद्र में नहीं बल्कि समान स्तर पर बैठे रहती है। सभी महत्त्वपूर्ण होते हैं लेकिन एक-दूसरे का सहयोग करते हैं। सत्ता सभी के सहयोग से ही बनी रहती है। वस्तुतः यह राज्य की सत्ता की अवधारणा में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के तौर पर देखा जाना चाहिए। यहीं पर गाँधी केंद्रीकरण को विकेंद्रीकरण में परिवर्तित करते हैं। यहाँ संप्रभुता का एक समान स्तरीय बंटवारा होता है और लोग सशक्त होते हैं। आज जिसे हम जनसहभागिता या लोक भागीदारी कहते हैं वह गाँधी की इसी अवधारणा का एक सशक्त और प्रत्यक्ष उदाहरण है। संप्रभुता की इस अवधारणा (महासागरीय वलय) में व्यक्ति महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं और अपने आप में संप्रभु भी। स्वराज वस्तुतः ऐसे ही संप्रभु व्यक्तियों द्वारा संभव है। स्वराज, जिस पर गाँधी बहुत बल देते थे, वह संप्रभुता की अवधारणा ही सही लोकतंत्र को परिभाषित करती है। ऐसी संप्रभुता, जिसमें हर व्यक्ति संप्रभु हो और परस्पर अन्योन्याश्रित प्रक्रिया के द्वारा ही लोगों से जुडा हुआ हो। वे स्वयं चेता हो, लेकिन दूसरों के हितों की भी परवाह अपने हितों के बराबर करता हो। गाँधी की यह अवधारणा वास्तविक विकेंद्रीकरण की अवधारणा को प्रस्तुत करती है। इसी बिंदु पर गाँधी राजनीति का उद्देश्य स्वराज की स्थापना भी मानते हैं और ग्राम स्वराज्य के सिद्धांत को प्रस्तुत करते हैं। इसे उनके राजनीतिक सिद्धांत के तौर पर भी देखना चाहिए, जो राजनीतिक संप्रभुता की समस्तरीय संरचना का सबसे व्यावहारिक उदाहरण कहा जा सकता है। यहाँ राज्य मिट नहीं जाता है बल्कि अपनी भूमिका को बदलकर शासन के स्थान पर सहयोगी संस्था के रूप में हो जाता है और विभिन्न स्तरों पर समन्वय संस्था के तौर पर कार्य करता है।[13,14]

वस्तुतः गाँधी के राजनीतिक दृष्टि का आधार मनुष्य की उनकी अवधारणा 'मनुष्य मूलतः अच्छा है और प्रकृति के नियम के हिसाब से वह अहिंसा का पालन करता है' से समझा जा सकता है। आज राजनीतिक दृष्टि का उद्देश्य भी इसी अनुसार बनना चाहिए। राजनीति का उद्देश्य मनुष्य की इसी अच्छाई को प्रेरित करने वाला होना चाहिए। ऐसे संस्थान बनाए जाने चाहिए जो उसे अच्छाई की ओर प्रेरित कर सकें और मनुष्य के समाज में जो बुराई उपस्थित है उसे कम से कम किया जाना चाहिए और ऐसा करते हुए भी अहिंसा के साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिए। गाँधी के राजनीतिक दृष्टि का मूल इन बिंदुओं में ही खोजा जा सकता है।उनके राजनीति दर्शन को समझने के लिए 'स्वराज' की उनकी धारणा को समझना होगा। गाँधी जब स्वराज की बात करते हैं तब उनका लक्ष्य संसाधनों पर समस्त लोगों के समान अधिकार को मानना होता है, बजाय इसके कि कुछ लोगों का संसाधनों पर नियंत्रण रहे। ऐसा करते हुए वह बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक में कोई भेद नहीं करते हैं। गाँधी के अनुसार वस्तुतः राज्य का उद्देश्य शासन करना नहीं होता है बल्कि सत्य की खोज करना हो जाता है। उस सत्य की खोज करना जहाँ सभी व्यक्ति मूल रूप से अच्छे हैं और उनके बीच परस्पर सौहार्दपूर्ण संबंध हैं। इन्हीं संबंधों को बनाए रखना तथा उसके लिए सहयोग करना ही राज्य का उद्देश्य हो जाता है और इसे प्राप्त करने की कला सत्याग्रह है। सत्ता के विकेंद्रीकरण से लोग सशक्त होते हैं, नीति स्पष्ट होती है और नियम लोगों के हितों के अनुकूल बनते हैं जो सामूहिक कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हैं। राज्य शक्ति का न्यूनतम प्रयोग करता है। लोग आपसी हितों के आधार पर अपने विवादों का निपटारा करते हैं। समाज मजबूत बनता है। इसीलिए गाँधी एक अराजकतावादी की तरह कहते हैं कि सरकार का हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिए। समुदाय को सशक्त होना चाहिए और अपने लोगों के हितों को इस तरीके से पूरा करना चाहिए कि अविरोध की स्थिति उत्पन्न न हो।[15,16]

'स्वराज' की परिकल्पना में उन्होंने सरकार की जरूरत को स्वीकार किया, लेकिन उनके अनुसार ऐसी सरकार के कार्यकलाप नाममात्र के ही होने चाहिए। उनका विचार था कि समाज के सबसे ऊपर और सबसे निचले वर्ग के कुछ ही लोग ऐसे हैं, जिन्हें नियंत्रित कर लिया जाए, तो सरकार का काम पूरा हो जाता है। देश के अधिकतर लोगों के लिए सरकार की कोई जरूरत नहीं है। धीरे-धीरे ऐसी स्थिति आ सकती है, जब प्रत्येक व्यक्ति अपनी अंतश्चेतना के आधार पर स्वतः ही संचालित होगा। ऐसी स्थिति में किसी को भी सरकार की जरूरत नहीं होगी। यह उनके चरम आदर्श 'रामराज्य' की कल्पना थी।1 उनके लिए स्वराज्य दूसरों पर शासन न होकर आत्मानुशासन है। जिसमें व्यक्ति स्वतंत्रता को महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसलिए वे अपने को टालस्टाय की भांति अहिंसक अराजकतावादी भी कहते हैं। गाँधी के लिए स्वाधीनता से बढकर स्वराज का महत्त्व था।'आज स्वाधीनता से हम यह समझते हैं कि अपनी जाति के अधीन एक शासन, जो शासन समाज के सारे जीवन का नियंत्रण करना चाहता है। स्वराज्य का अर्थ है, एक ऐसी व्यवस्था, जहाँ प्रत्येक मनुष्य के अपने जीवन पर उसका अधिकार अनेकांश में अक्षुण्ण है। समाज के बडे काम करने के लिए वह अन्य लोगों के साथ स्वेच्छा से सहयोग करता है और सहयोगिता की जो व्यवस्था बन जाती है, वह शासन या दंड के द्वारा मनुष्य को नहीं चलाती है।'2गाँधी के यहाँ अधिकार प्राप्ति के लिए कर्त्तव्य का पालन जरूरी3 है। गाँधी की नजर में अधिकार कर्त्तव्य के पीछे-पीछे चलते हैं। इसलिए उन्होंने अधिकार से ज्यादा कर्त्तव्य पर * दिया क्योंकि उनके अनुसार कर्त्तव्य के जरीये ही अधिकार की प्राप्ति हो सकती है।[17,18]

ISSN: 2319 – 8753
International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

गाँधी के लिए महज राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति ही पर्याप्त न थी। इसलिए जब देश भर में आजादी का जश्न मनाया जा रहा था, गाँधी ने उन समारोहों में हिस्सा नहीं लिया। जब हिंदुस्तान की सरकार के सूचना और प्रसारण विभाग का एक अधिकारी गाँधी के पास उनके संदेश के लिए आया तो उन्होंने जवाब दिया कि 'मैंने मैदान छोड दिया है।' जब उनसे फिर से आग्रह किया गया तो उन्होंने कहा, 'मुझे कोई भी संदेश नहीं देना है। यदि ऐसा करना बुरा है तो होता रहे।'4 इससे स्पष्ट है कि गाँधी सीमित अर्थों की इस आजादी से संतुष्ट नहीं थे। माक्र्सवादी लेखक राजनीपाम दत्त भी लिखते हैं कि, 'साम्राज्यवाद और राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग दोनों का हित इसी में था कि जनसाधारण की क्रांति को रोका जाए। इन दोनों के बीच सौदेबाजी का नतीजा था माउंटबेटन समझौते का सुलहवादी स्वरूप। इस वजह से आजादी के स्वरूप और उसकी शर्तों को शुरुआत में ही बडे गंभीर रूप से सीमित होना ही था। ऐसा ही हुआ भी। गाँधी ने वास्तव में इस समझौते को यह कहकर खारिज कर दिया कि यह स्वराज की उनकी धारणा के अनुकूल नहीं है। उन्होंने अगस्त 1947 के जश्नों में भाग तक नहीं लिया।5 हत्या के चार दिन पूर्व 1948 के गणतंत्र दिवस के अवसर पर गाँधी ने कहा, '26 जनवरी का यह दिन गणतंत्र दिवस है। इसे मनाना तब बडा सही था जब हम उस आजादी के लिए लड रहे थे, जिसे न हमने देखा था न ही जिसका संचालन किया था। अब हमने इसका संचालन कर लिया है और हमारा मोहभंग हो गया है, कम से कम मेरा तो हुआ है, आपका भले ही न हुआ हो।'6 क्योंकि गाँधी के लिए स्वराज्य का अर्थ अंग्रेजों की अनुपस्थिति मात्र नहीं था।गाँधी राजनीतिक आजादी को अधूरा मानकर चुप नहीं बैठते। 26 जून, 1947 को दिल्ली में उनसे मुलाकात करने आए दो लोगों से अपनी बातचीत में वे कहते हैं कि, [19,20]'आज जो आजादी हमें मिलने ही वाली है, उससे मैं तनिक भी संतुष्ट नहीं हूँ; कारण, मेरे आजादी की कल्पना बिलकुल भिन्न है। मैं केवल राजनीतिक दृष्टि से ही आजाद होना नहीं चाहता।'7 इसलिए गाँधी देश के हर नागरिक को 'राजनीतिक तालीम' देने की बात करते हैं। और इस तालीम में आने वाली सरकारी दखलअंदाजी अथवा रुकावटों से भी दो-दो हाथ करने8 की बात करते हैं। वे जनता के राजनीतिक तालीम की पहचान बुनियादी हक के रूप में करते हैं और वे मानते हैं कि, 'इस बुनियादी हक के बिना स्वराज्य मिल ही नहीं सकता।'9 जो लोग गाँधी पर मध्यवर्ग, पूँजीपतियों-सामंतों-जमींदारों का पक्षधर होने का आरोप लगाते हैं, उन्हें गाँधी के राजनीतिक दर्शन को भली-भांति समझना होगा।राष्ट्रीय रंगमंच पर आए हुए अपने पूर्ववर्ती राजनेताओं से गाँधीजी इस अर्थ में भिन्न थे कि उन्होंने चुने हुए कुछ विशिष्ट लोगों की राजनीति को ठुकराकर जनांदोलन की कुंजी लाकर सामने रख दी। वे एक ऐसे नेता थे, जिनका जनता के दिल और दिमाग से गहरा संफ था, जो उसकी व्याख्या करने के साथ ही साथ उसे अपने विचारों के अनुरूप ढाल सकता था। वे यदि लहर के उत्तुंग शिखर थे तो वह लहर स्वयं जनता ही थी।1° जनता पर उनका असीम भरोसा था। विकेन्द्रीकरण, कर्त्तव्य पर *ाोर, व्यक्ति स्वतंत्रता सहित रामराज्य की उनकी कल्पना के पीछे जनता में उनकी अगाध श्रद्धा ही थी। वे शासन-सत्ता के मुखापेक्षी बने रहने के बजाय जीवन के हर क्षेत्र में आम जनता की अहिंसक पहलकदमियों को इतना बढा देना चाहते हैं, ताकि सत्ता का औचित्य ही समाप्त हो जाय। गाँधी लोकतंत्र के प्रचलित स्वरूप से संतुष्ट नहीं थे। उनके लोकतंत्र में गांव को इकाई माना गया है। उनका सच्चा लोकतंत्र केंद्र में बैठे बीस लोगों के द्वारा नहीं चलाया जा सकता। इसका संचालन तो नीचे से, हर गाँव के लोग करेंगे।11 वे लोकतंत्र में जनता की इच्छा को सर्वोपरि12 मानते थे। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की पुरजोर वकालत करते हुए वे कहते हैं कि, वाणी और लेखनी की स्वतंत्रता स्वराज की आधारशिला है। अपनी पूरी ताकत लगाकर वे इसकी रक्षा करने की बात कहते हैं। इसी कारण वे मुट्ठी भर लोगों द्वारा सत्ता प्राप्ति के बजाय जनता में प्रतिरोध का सामर्थ्य विकसित करते हुए स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं।13 और उनके लिए स्वराज का अर्थ है सब लोगों का शासन, न्याय का शासन। इस शासन में, मंत्री चाहे हिंदू हों, मुसलमान हों या सिख हों और विधानसभाओं के सदस्य चाहे केवल हिंदू हों, केवल मुसलमान हों अथवा किसी अन्य समुदाय के हों, सबको निष्पक्ष न्याय14 करना होगा। गाँधी के लिए 'स्वराज का अर्थ है सरकार के नियंत्रण से मुक्त होने का सतत प्रयास, यह सरकार विदेशी हो अथवा राष्ट्रीय।'15 सत्ता द्वारा जनता पर किसी प्रकार के नियंत्रण को वे व्यक्ति स्वतंत्रता में बाधक मानते हैं।[18,19]

आमतौर पर यह माना जाता है कि जनता को सत्ता विधायिका के जरीये प्राप्त होती है। इस मान्यता के विपरीत गाँधी सत्ता का मूल स्रोत जनता में निहित मानते हैं। वे मानते हैं कि, 'सत्ता जनता के बीच रहती है, जनता की होती है और जनता समय-समय पर अपने प्रतिनिधियों की हैसियत से जिनको पसंद करती है, उतने समय के लिए उसे सौंप देती है।'16 जनता से भिन्न अथवा स्वतंत्र विधायिका की किसी सत्ता को गाँधी वैध नहीं मानते। गाँधी सत्ता के अधिकतम विकेन्द्रीकरण के पक्षधर थे। केंद्रीकृत सत्ता से निरंकुशता का खतरा बना रहता है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण से उत्तरदायित्व की भावना बढती है। इसलिए गाँधी ने ग्राम स्वराज्य की स्थापना पर *ाोर दिया था। इस ग्राम स्वराज्य में सत्ता और राज्य का दखल कम से कम हो। गाँधी मानते थे कि राज्य से मनुष्य की व्यक्तिगत विशेषता को क्षति पहुँचती है।गाँधी के लिए दलीय लोकतंत्र ही लोकतंत्र का अंतिम स्वरूप नहीं है, उसमें विकास की गुंजाइश है। चर्चित साहित्यकार जैनेन्द्र उम्मीद करते हैं कि, ऐसा कुछ यदि भारतवर्ष संभव करके दिखा सका तो गाँधीजी से आरंभ हुई परंपरा सफल हुई मानी जायेगी।17 लेकिन ऐसा हुआ नहीं। इसके विपरीत आज दुनिया के सभी देश दुर्बल वर्ग के प्रति अहसान दिखाने का ढोंग करते हैं।.... जनतंत्र की गाँधी की धारणा में दुर्बल से दुर्बल व्यक्ति को वही अवसर मिलेगा जो बलवान से बलवान व्यक्ति को मिलता है।18 गाँधी अब्राहम लिंकन के लोकतंत्र का अर्थ बताते हुए कहते हैं; 'जनता के लिए जनता द्वारा जनता का शासन' का अर्थ है- 'शुद्ध अहिंसात्मक शासन।' हिंसात्मक जनतंत्र हिंसात्मक उपायों द्वारा समस्त विरोध पक्ष को दबा देता है या समाप्त कर देता है। इसमें व्यक्ति की स्वाधीनता की गुंजाइश नहीं।19 इसलिए प्रचलित लोकतंत्र से गाँधी संतुष्ट होकर चुप बैठने के बजाय इसे वास्तविक अर्थों के लोकतंत्र में तब्दील करने के लिए अंत तक प्रयत्नशील रहते हैं।

अपने इन्हीं विचारों के कारण गाँधी संसदीय लोकतंत्र को अंतिम आदर्श मानने को तैयार नहीं थे। बल्कि उन्होंने तो ब्रिटिश पार्लियामेंट, जिसे पार्लियामेंटों की माता कहा जाता है, को 'बांझ' और 'वेश्या' तक करार दिया। वैसे संसदीय लोकतंत्र को अन्य

विद्वानों और दार्शनिकों ने भी शक की निगाह से देखा है। लेकिन गाँधी ने उसे भिन्न न*ारिए से देखने-समझने और अहिंसक जनांदोलनों के जरीये बदलने की कोशिश की है। आजादी के बाद संसदीय किस्म की शासन व्यवस्था को उन्होंने तात्कालिक अनिवार्यता के रूप में ही कबूल किया था। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि, चूंकि पार्लियामेंट्री शासन व्यवस्था में निर्णय बहुमत से लिए जाते हैं इसलिए यह परस्पर अनुकूल समूहों में ही ठीक-ठीक काम देता है। लेकिन भारत में जहाँ अंग्रेजी हुकूमत ने सांप्रदायिक आधार पर जनता को विभाजित कर मतदाताओं के अलग-अलग गिरोह खडे कर दिये हुए हैं और बनावटी दीवारें बना दी हैं वहाँ पार्लियामेंट्री शासन-पद्धति का दिखावा ही किया जा सकता है। गाँधी कहते हैं कि, 'ऐसी अलग-अलग और बनावटी इकाइयों को, जिनमें आपसी मेल नहीं है, एक ही मंच पर एक-से काम के लिए इकट्ठा करने से जीती-जागती एकता कभी पैदा नहीं हो सकती।'2° गाँधी बहुमत की तानाशाही के स्थान पर एक ऐसे नवीन ग्राम गणराज्य, जिसे अक्सर भारत के पुराने ग्रामीण शासन से जोड दिया जाता है, जो सही नहीं है, के माध्यम से एक ऐसे शासन की स्थापना करना चाहते हैं जिसमें अल्पमत की आवाज को भी सही होने के बावजूद महज बहुमत के आधार पर दबाया न जा सकेगा। वे दूसरों द्वारा थोपे गए अनुशासन के बजाय आत्मानुशासन के हिमायती थे।वस्तुतः गाँधी सरकार को जनता के अधिकार में लाकर असली गणतंत्र की प्रतिष्ठा करना चाहते थे।सरकार की, पुलिस की या फौज की ताकत, फिर वह कितनी ही जबर्दस्त क्यों न हो, थोडे ही लोगों को दबाने में कारगर होती है। लेकिन जब समूचा राष्ट्र सब कुछ सहने को तैयार हो जाता है, तो उसके दृढ संकल्प को डिगाने में किसी पुलिस की या फौज की कोई जबर्दस्ती काम नहीं देती। आधुनिक युग में ऐसी सरकारों का अभाव नहीं है जो बहुत खुले तौर पर उच्च वर्ग द्वारा शासन का उपकरण हैं जैसा कि उन आर्थिक रूप से पिछडे देशों में है जहाँ एक अशिक्षित, असंगठित और उत्साहहीन कृषक वर्ग पर भूस्वामियों का प्रभुत्व है।[20]

गाँधी अपने को अहिंसक अराजकतावादी बताते हुए राज्य का खात्मा चाहते हैं। उनकी कल्पना के स्वराज्य, जो ग्राम स्वराज्य अथवा 'रामराज्य' के रूप में अभिव्यक्त हुआ है, वह राज्य शक्ति का लोप चाहता है। गाँधी सत्ता और शक्ति को इतना विकेंद्रित कर देना चाहते हैं कि राज्य अपने आप अपनी अहमियत खो देगा। साम्यवाद जहाँ अंतिम तौर पर सरकारों का संसार से सम्पूर्ण रूप से लोप का हिमायती है, वहीं गाँधीजी राजशक्ति का सम्पूर्ण रूप से लोप चाहते हुए भी सोचते हैं कि जब तक पृथ्वी पर मनुष्य-समाज है, तब तक शायद राज्य शक्ति की भी आवश्यकता रहेगी। इसलिए गाँधी इस बात के लिए प्रयत्नशील रहे कि किस प्रकार स्वेच्छा से निर्माण की हुई संस्थाएँ संसार में बढा दी जाएँ और सरकार की नियंत्रण करने की शक्ति को कम किया जाय। गाँधी राज्य को हिंसा का मूल स्रोत मानते हैं। गाँधी का स्वदेशी भी अपने मूल रूप में भारत में नये अर्थात् भारतीय राज्य की स्थापना का सिद्धांत है। गाँधीवादी चिंतक राजीव वोरा लिखते हैं कि, उसे महज आर्थिक क्षेत्र का या उसके एक पक्ष, अर्थात् टेक्नोलॉजी तक ही सीमित करके देखने का चलन पिछले कुछ दशकों से रहा। परिणामस्वरूप स्वदेशी में किसी प्रकार की शक्ति का संचार नहीं हुआ। गाँधीजी का कहना कि स्वदेशी के बिना स्वराज की कल्पना नहीं की जा सकती तथा स्वराज एवं रामराज्य एक ही है। यह स्पष्ट करता है कि स्वदेशी का विचार राज्य स्थापना का सिद्धांत है। किसी भी सभ्यता पर जब विदेशी राज्य की स्थापना हो जाती है, तब अपने राज्य की स्थापना का इच्छुक समूह संघों की रचना करता है। उसी प्रकार गाँधीजी ने भी अपने समय में अनेक विविध संघों की रचना तो की, लेकिन उनके निधन के बाद दृष्टि के अभाव में उन संघों की शक्ति का लोप हो गया।फलस्वरूप जनता पर सत्ता हावी होती चली जा रही है। गाँधी सत्ता संचालन में आमलोगों की प्रत्यक्ष भागीदारी को स्थान देते हैं। उन्होंने सर्वोदय दर्शन के आधार पर समाज के अंतिम व्यक्ति को केंद्र में रखते हुए ऐसे समाज निर्माण का सपना देखा था। गाँधी के राजनीतिक चिंतन में व्यक्ति स्वतंत्रता की काफी अहमियत है। उनकी स्वतंत्रता की अवधारणा में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रतिभा का उपयोग करने की आ*ा ादी की बात की गई है। किंतु किसी व्यक्ति को अपनी प्रतिभा से होने वाले लाभों के मनमाने उपयोग का अधिकार उन्हें स्वीकार नहीं था। वे व्यक्ति को राष्ट्र अथवा, अपने चहुंओर विद्यमान सामाजिक संरचना का अंग मानते हैं। इसलिए व्यक्ति को अपनी प्रतिभा का उपयोग केवल स्वहित में न कर उस सामाजिक संरचना के हित में करना चाहिए जिससे वह सम्बद्ध है।गाँधी के भारत की आजादी की आकांक्षा में दुनिया की हरेक प्रजाति की आ*ा ादी की भावना निहित है। इस अर्थ में गाँधी की स्वतंत्रता की आकांक्षा अत्यंत ही व्यापक हो जाती है। वस्तुतः वे भारत की मुक्ति के जरीये दुनिया की सभी तथाकथित दुर्बल प्रजातियों को पाश्चात्य शोषण से मुक्त कराना चाहते हैं। गाँधी हर व्यक्ति की स्वतंत्रता तो चाहते हैं किन्तु उनका यह व्यक्ति स्वातंत्र्य नैतिक अर्थों में किसी दूसरे की स्वतंत्रता का अतिक्रमण नहीं करता।गाँधी के लिए स्वतंत्रता का अर्थ केवल भौगोलिक अथवा राजनीतिक स्वतंत्रता मात्र नहीं है। उनके लिए मनुष्य की स्वतंत्रता का अर्थ उसके अधिकतम स्वावलंबन से है। उनके अनुसार यदि मनुष्य को स्वतंत्रता का आनंद लेना हो तो 'प्रत्येक मनुष्य को रो*ामर्रा के उपयोग की जिस ची*ा की जरूरत हो, उसे स्वयं पैदा करना सीख ले।' वे इतने पर ही नहीं रुकते बल्कि आगे बढकर कहते हैं कि, 'जो ची*ा आदमी खुद पैदा न कर सके, उसके बिना काम चला लेना चाहिए। इससे स्वावलंबन बढेगा और वह उत्तरोत्तर प्रगति करेगा।' गाँधी की दृष्टि में स्वावलंबन स्वतंत्रता की बुनियाद है और परावलंबन गुलामी की निशानी। वे आवश्यकताओं को बढाने पर आधारित पूंजीवादी अर्थनीति को मनुष्य को परावलंबी और अंततः गुलाम बनाने वाला मानते हैं। उनके अनुसार पूंजीवाद का नाश एक तरफ इसके खिलाफ शोर मचाकर और दूसरी तरफ अपनी आवश्यकताओं को बढाते जाने से नहीं हो सकता। बल्कि गाँधी तो अपनी आवश्यकताओं को कम करने तथा अधिकतम स्वावलंबन में ही पूंजीवाद का नाश देखते हैं। यही कारण है कि गाँधी पूँजीपतियों का जबर्दस्ती नाश करने में न तो किसी प्रकार के त्याग का दर्शन ही कर पाते हैं और न ही इसमें कोई बहादुरी3° ही देखते हैं।[16,17]

गाँधी अपने आध्यात्मिक प्रयोगों के जरीये ही राजनीतिक क्षेत्र में प्रेरणा ग्रहण करते हैं। दास्तोएव्स्की ने भी रूस के संदर्भ में लिखा है कि, 'अंततः हम समझने लगे हैं कि हम स्पष्टतया परिभाषित और मौलिक चरित्र के राष्ट्र हैं और हमारी समस्या एक नई जीवन-पद्धति विकसित करने की है, जो हमारी मिट्टी की उपज हो और लोक परंपराओं से जीवनी-शक्ति लेती हो।' दास्तोएव्स्की यूरोप की

भौतिक प्रगति में तबाही का अक्स देखते हैं। वे कहते हैं, 'ये ईश्वरविहीन देश। ये मनुष्य निर्मित ईश्वर के देश, संपदा, हिसाब-किताब, विज्ञान के साथ अपनी कृत्रिमता के बोझ से दफन हो रहे हैं। मुक्ति की तलाश जन से शुरू होनी चाहिए- उन सीधे सरल रूसी जनों से, जिनमें शैशव की आस्था आज भी विद्यमान है और इतिहास के द्वार पर प्रहार करने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'दास्तोएव्स्की लिखते हैं कि, 'पश्चिम ने क्राइस्ट को खो दिया है।.... यही कारण है कि पश्चिम मर रहा है। अन्य कोई कारण नहीं।'गाँधी भी भारत में नई जीवन शैली और नई राजनीति के अग्रदूत थे। इसी परिप्रेक्ष्य में उनके रामराज्य को समझने की जरूरत है।

पाश्चात्य स्रोतों पर राजनीतिक चिंतन की इमारत खडी करने के बजाय गाँधी ने लोकप्रिय धार्मिक प्रतीकों का सहारा लिया था। 'गाँधी की सफलता का जितना बडा कारण राजनीति में एक नए मुहावरे का इस्तेमाल था उतनी ही बडी वजह यह भी थी कि गाँधी को भारतीय समाज की संरचना की सही समझ थी और उनको व्यक्ति की सामाजिक वफादारियों की गहरी पहचान भी थी तथा वे जानते थे कि इन वफादारियों का उपयोग राजनीतिक कार्रवाई के लिए कैसे किया जा सकता है। गाँधी के पूर्ववर्ती तथा समकालीन राजनीतिज्ञों में से अधिकांश भारतीय समाज को एक संश्लिष्ट समाज मानकर चल रहे थे, इसलिए वे व्यापक जनाधार वाले राजनीतिक आंदोलन खडे नहीं कर पाये। वे भारत की असली तस्वीर को देख रहे थे, चूंकि वह समझ रहे थे कि यह देश तरह-तरह के वर्गों, समुदायों और धार्मिक समूहों का एक जमघट है, इसलिए वे इस उपमहाद्वीप के लोगों में 'न भूतो न भविष्यति' कोटि की जागरूकता पैदा कर पाये।'

यही कारण है कि गाँधी अपने अर्थों के धर्म का राजनीति से अनिवार्य संबंध स्थापित करते हैं। उनके आंदोलनों का धार्मिक पहलू तो जगजाहिर रहा है, किन्तु उसे ठीक संदर्भ में शायद ही समझा गया हो। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की दृष्टि में असहयोग आंदोलन राजनीतिक चेतना, सुधारवाद, परंपरावाद और धार्मिकता का अद्‌भुत सम्मिश्रण था। जहाँ धार्मिक परंपरा पर आश्रित खिलाफत की पुष्टि उसका लक्ष्य था, वहाँ कतिपय धार्मिक परंपराओं को सुधारकर अस्पृश्यता निवारण उसके कार्यक्रम का महत्त्वपूर्ण अंग था। स्वराज्य के निमित्त राजनीतिक चेतना का विस्तार और खिलाफत संबंधी धार्मिक भावनाओं की पुष्टि, दोनों ही उसके महत्त्वपूर्ण कार्य थे।असहयोग आंदोलन ने राजनीतिक कार्यकर्ताओं तथा जनता में प्रतिरोध की भावनाओं को पुष्ट किया तथा देश को गाँधीजी का नेतृत्व और स्वतंत्रता-संघर्ष का नया उपकरण प्रदान किया। पर खिलाफत आंदोलन ने मुसलमानों में जितनी राजनीतिक जागृति पैदा की, उससे अधिक उनमें धार्मिक भावनाओं को पुष्ट किया और दोनों ने उग्र सांप्रदायिक राजनीति का रूप धारण कर लिया।वस्तुतः यह गाँधी के इस आंदोलन के कारण हुआ, ऐसा मानना तर्कसंगत नहीं है। गाँधी के सर्वधर्म समभाव ने तो देश में सांप्रदायिक एकता लाने में ऐतिहासिक भूमिका ही अदा की थी। ब्रिटिश हुकूमत की फूट डालो और राज करो की नीति एवं निहित स्वार्थी सांप्रदायिक संकीर्णतावादी ताकतों ने ही देश में सांप्रदायिक विद्वेष उत्पन्न कर इस कडी को छिन्न-भिन्न करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। गाँधी के रामराज्य में नस्ल, जाति, धर्म, संप्रदाय, लिंग अथवा आर्थिक आधार पर भेदभाव का पूर्णतः निषेध किया गया है।[15,16]

परिणाम

73वें संविधान संशोधन अधिनियम की विशेषताएँ

इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में भाग-9 जोड़ा गया था। मूल संविधान में भाग-9 के अंतर्गत पंचायती राज से संबंधित उपबंधों की चर्चा (अनुच्छेद 243) की गई है । भाग-9 में **'पंचायतें'** नामक शीर्षक के तहत अनुच्छेद 243-243ण (243-243O) तक पंचायती राज से संबंधित उपबंध हैं।ग्राम सभा गाँव के स्तर पर उन शक्तियों का उपयोग कर सकती है और वे कार्य कर सकती है जैसा राज्य विधानमंडल विनिर्धारित करें।73वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान में 11वीं अनुसूची जोड़ी गई और इसके तहत पंचायतों के अंतर्गत 29 विषयाें की सूची की व्यवस्था की गई।पंचायत की सभी सीटों को पंचायत के निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा निर्वाचित व्यक्तियों से भरा जाएगा। इसके लिये प्रत्येक पंचायत क्षेत्र को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में इस प्रकार विभाजित किया जाएगा कि प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की आबादी और आवंटित क्षेत्रों की संख्या के बीच का अनुपात साध्य हो और सभी पंचायत क्षेत्र में समान हो।संविधान का अनुच्छेद 243 (घ) अनुसूचित जाति और जनजाति के लिये सीटों को आरक्षित किये जाने की सुविधा देता है। प्रत्येक पंचायत में सीटों का आरक्षण वहाँ के आबादी के अनुपात में होगा। अनुसूचित जाति और जनजाति की महिलाओं के लिये आरक्षित सीटों की संख्या कुल आरक्षित सीटों के एक-तिहाई से कम नहीं होगी। पंचायतों का कार्यकाल पाँच वर्ष निर्धारित है लेकिन कार्यकाल से पहले भी इसे भंग किया जा सकता है। पंचायत गठित करने के लिये नए चुनाव कार्यकाल की अवधि की समाप्ति या पंचायत भंग होने की तिथि से 6 महीने के भीतर ही करा लिये जाने चाहिये। [11,12]

74वें संविधान संशोधन अधिनियम की विशेषताएँ

भारतीय संविधान में 74वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 द्वारा नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा दिया गया तथा इस संशोधन के माध्यम से संविधान में 'भाग 9 क' जोड़ा गया एवं यह 1 जून, 1993 से प्रभावी हुआ।अनुच्छेद 243त (243P) से 243यछ (243ZG) तक नगरपालिकाओं से संबंधित उपबंध किये गए हैं। संविधान के अनुच्छेद 243 (थ) में नगरपालिकाओं के तीन स्तरों के बारे में उपबंध हैं, जो इस प्रकार हैं-

नगर पंचायत- ऐसे संक्रमणशील क्षेत्रों में गठित की जाती है, जो गाँव से शहरों में परिवर्तित हो रहे हैं।**नगरपालिका परिषद-** छोटे शहरों अथवा लघु नगरीय क्षेत्रों में गठित किया जाता है।**नगर निगम-** बड़े नगरीय क्षेत्रों, महानगरों में गठित की जाती है। इसके द्वारा संविधान में 12वीं अनुसूची जोड़ी गई जिसके अंतर्गत नगरपालिकाओं को 18 विषयों की सूची विनिर्दिष्ट की गई है।नगरपालिका की सभी सीटों को नगरपालिका निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन से चुने गए व्यक्तियों द्वारा भरा जाएगा।प्रत्येक नगरपालिका में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिये सीटें आरक्षित की जाएंगी।आरक्षित सीटों की संख्या एक-तिहाई से कम नहीं होगी।राज्य का विधानमंडल विधि द्वारा नगरपालिकाओं को कर लगाने और ऐसे करों, शुल्कों, टोल और फीस इत्यादि को उचित तरीके से एकत्र करने के लिये प्राधिकृत कर सकता है।[10,11]

पंचायतों के संबंध में गांधी दर्शन

गांधी अपने को ग्रामवासी ही मानते थे और गाँव में ही बस गये थे। गाँव की जरुरतें पूरी करने के लिये उन्होंने अनेक संस्थायें कायम की थीं और ग्रामवासियों की शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक स्थिति सुधारने का भरसक प्रयत्न किया।उनका दृढ़ विश्वास था कि गाँवों की स्थिति में सुधार करके ही देश को सभी दृष्टि से अपराजेय बनाया जा सकता है। ब्रिटिश सरकार द्वारा गाँवों को पराश्रित बनाने का जो षड्यंत्र किया गया था उसे समझकर ही वे ग्रामोत्थान को सब रोगों की दवा मानते थे।इसलिये संविधान में अनुच्छेद के अंतर्गत गांधी जी की कल्पना के अनुसार ही ग्राम पंचायतों के संगठन की व्यवस्था की गई। गांधी जी का मानना था कि ग्राम पंचायतों को प्रभावशील होने में तथा प्राचीन गौरव के अनुकूल होने में कुछ समय अवश्य लगेगा। यदि प्रारंभ में ही उनके हाथों में दण्डकारी शक्ति सौंप दी गई तो उसका अनुकूल प्रभाव पड़ने के स्थान पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा इसलिये ग्राम पंचायतों को प्रारंभ में ही ऐसे अधिकार देने में सतर्कता आवश्यक है, जिसके कारण उनके अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह न लगे। प्रारम्भ में यह आवश्यक है कि पंचायत को जुर्माना करने या किसी का सामाजिक बहिष्कार करने की सत्ता न दी जाए। गाँवों में सामाजिक बहिष्कार अज्ञानी या अविवेकी लोगों के हाथ में एक खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ है। जुर्माना करने का अधिकार भी हानिकारक साबित हो सकता है और अपने उद्देश्य को नष्ट कर सकता है।गांधी जी के इस विचार का तात्पर्य पंचायत को अधिकार विहीन बनाना नहीं बल्कि अधिकारों का दंड देने के रूप में संयमित प्रयोग किये जाने से था। गांधी जी पंचायत को अधिकार भोगने वाली संस्था न बनाकर सदभाव जागृत करने वाली रचनात्मक संस्था के रूप में विकसित करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि यह संस्था गाँव में सुधार का वातावरण पैदा कर सकती है।[9,10]

पंचायती राज्य की सफलता में चुनौतियाँ

पंचायतों के पास वित्त प्राप्ति का कोई मज़बूत आधार नहीं है उन्हें वित्त के लिये राज्य सरकारों पर निर्भर रहना पड़ता है। ज्ञातव्य है कि राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराया गया वित्त किसी विशेष मद में खर्च करने के लिये ही होता है।कई राज्यों में पंचायतों का निर्वाचन नियत समय पर नहीं हो पाता है।कई पंचायतों में जहाँ महिला प्रमुख हैं वहाँ कार्य उनके किसी पुरुष रिश्तेदार के आदेश पर होता है, महिलाएँ केवल नाममात्र की प्रमुख होती हैं। इससे पंचायतों में महिला आरक्षण का उद्देश्य नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है।क्षेत्रीय राजनीतिक संगठन पंचायतों के मामलों में हस्तक्षेप करते हैं जिससे उनके कार्य एवं निर्णय प्रभावित होते हैं।इस व्यवस्था में कई बार पंचायतों के निर्वाचित सदस्यों एवं राज्य द्वारा नियुक्त पदाधिकारियों के बीच सामंजस्य बनाना मुश्किल होता है, जिससे पंचायतों का विकास प्रभावित होता है।

पंचायती राज व्यवस्था को सशक्त करने के उपाय

पंचायती राज संस्थाओं को कर लगाने के कुछ व्यापक अधिकार दिये जाने चाहिये। पंचायती राज संस्थाएँ खुद अपने वित्तीय साधनों में वृद्धि करें। इसके अलावा 14वें वित्त आयोग ने पंचायतों के वित्त आवंटन में बढ़ोतरी की है। इस दिशा में और भी बेहतर कदम बढ़ाए जाने की ज़रुरत है।पंचायती राज संस्थाओं को और अधिक कार्यपालिकीय अधिकार दिये जाएँ और बजट आवंटन के साथ ही समय-समय पर विश्वसनीय लेखा परीक्षण भी कराया जाना चाहिये। इस दिशा में सरकार द्वारा **ई-ग्राम स्वराज पोर्टल** का शुभारंभ एक सराहनीय प्रयास है। महिलाओं को मानसिक एवं सामाजिक रूप से अधिक-से-अधिक सशक्त बनाना चाहिये जिससे निर्णय लेने के मामलों में आत्मनिर्भर बन सके।पंचायतों का निर्वाचन नियत समय पर राज्य निर्वाचन आयोग के मानदंडों पर क्षेत्रीय संगठनों के हस्तक्षेप के बिना होना चाहिये।पंचायतों का उनके प्रदर्शन के आधार पर रैंकिंग का आवंटन करना चाहिये तथा इस रैंकिंग में शीर्ष स्थान पाने वाली पंचायत को पुरुस्कृत करना चाहिये।[8,9]

निष्कर्ष

पिछले 70 वर्षों में भारत में व्यापक बदलाव आया है। यह देश गांवों में बसता था, हमने इस देश में लोकतांत्रिक सिद्धांतों का उपयोग करके परिवर्तन किया है। 70 साल पहले भारत में कठोर जाति प्रथा थी, किसी तरह की गतिशीलता न थी, लोग कुछ अधिक करने की चाह तक नहीं कर सकते थे, वे जड़वत थे। भारत इसी के लिए संघर्ष करता आया है और हम उसे हराने में सफल हुए हैं- पूरी तरह नहीं, लेकिन संतोषजनक पैमाने पर। चीन में भी इसी तरह का बदलाव देखा गया था, हालांकि विचार तो समान ही थे, लेकिन उसके तरीके काफी अलग थे। हमारा बदलाव विकेन्द्रीकृत था, कोई भी व्यक्ति जो चाहता था, उसे कर सकता था, कोई भी कहीं यात्रा करना चाहे, कर सकता था, यह नैसर्गिक है, यह अव्यवस्थित भी है। चीन का तरीका केंद्रीकृत है, यह कम्युनिस्ट पार्टी का

तरीका है और इसके बदलाव के शुरुआती चरण में काफी ज्यादा हिंसा देखी गयी।यदि पिछले 70 वर्षों और उससे पहले हासिल की गयी भारत की सफलता पर गौर करें, तो पाएंगे कि हम सबसे ज्यादा समृद्ध तभी हुए हैं, जब हमने सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया है। यह सत्ता को समान रूप से बंटवारा करने और एकाधिकार खत्म करने से संबंधित है। यह लोगों को सत्ता लौटाने से संबंधित है। हमारा मानना है कि हमें अपने लोगों की समस्याओं को सुलझाते समय उनके ज्ञान पर भरोसा करना जरुरी है और नीतियां तैयार करने की दिशा में सतह से शीर्ष का दृष्टिकोण अपनाना जरुरी है।[7,8]

जब नीतिगत निर्णय की बात आती है, तो हमारा मानना है कि यह काम जमीनी स्तर पर होना चाहिए। दिल्ली के गलियारे अक्सर जमीनी हकीकतों से अनजान होते हैं और यही कारण है कि केंद्रीय स्तर पर बनने वाली योजनाओं में खामियां होती हैं, जो लोगों के बीच असंतोष जगाती हैं। स्थानीय लोग अपनी समस्याओं को सबसे बेहतर ढंग से समझते हैं, इसलिए इन समस्याओं से निपटने के लिए उन्हें यथासंभव अधिकार और शक्तियां दी जानी चाहिए। इसी तरीके का अनुसरण करके हमने जो नीतियां तैयार कीं, वे बेहद सफल रही हैं। दुनिया की सबसे बड़ी रोजगार योजनाओं में से एक-नरेगा कांग्रेस के सामान्य कार्यकर्ता के अवलोकन के आधार पर तैयार हुई। उसने देखा कि स्थानीय तहसीलदार नरेगा जैसी योजना को सफलतापूर्वक लागू करके किसानों और मजदूरों को ईमानदारी से रोजगार के जरिये अपने हालात में सुधार करने के लिए प्रेरित कर रहा है। आरटीआई, खाद्य सुरक्षा और शिक्षा का अधिकार के मामले में भी यही किया गया। ऐसा प्रबल प्रभाव वही सरकार हासिल कर सकती है, जो अपने लोगों को नियंत्रित नहीं करना चाहती, बल्कि उनका उत्थान करने और उनको सशक्त बनाने का इरादा रखती है।

यह चिंतन शैली केवल सामाजिक विकास के कार्यक्रमों या नीति बनाने पर ही लागू नहीं होती। यह केवल तभी असरदार हो सकती है, जब इस विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए देश में शासन व्यवस्था के प्रति हमारे नजरिये तक ले जाया जाए। कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की दिशा में सत्ता का विकेंद्रीकरण सरकार की सफलता की कुंजी है। जब कोई सरकार मुख्य भूमिका निभाने की बजाय तटस्थ रह कर काम करती है, तो वो अपने लोगों के लाभ के लिये और अधिक तेजी से एवं प्रभावी ढंग से काम करती है।हमारा मानना है कि यह पद्धति समाज को व्यवस्थित करने की भी कुंजी है। आरएसएस और कांग्रेस के बीच अनेक मतभेद हैं, एक प्रमुख मतभेद समाज में व्यवस्था कायम करने के बारे में हमारे नजरिये को लेकर है। आरएसएस का दृष्टिकोण ऊपर से नीचे पदक्रम या हायरार्की है, जहां ज्ञान केंद्रीकृत है - इसलिए सत्ता भी केंद्रीकृत होती है। कांग्रेस का भारत को व्यवस्थित बनाने का नजरिया विकेन्द्रीकृत संरचना का है, जहां ज्ञान सभी के लिये सुलभ हो, इस तरह पदक्रम या हायरार्की को कम किया जाता है।सत्ता का विकेंद्रीकरण तभी संभव है जब तार्किक चिंतन की शुरुआत घर से ही हो। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में हम यह सुनिश्चित करने के लिए संकल्पबद्ध हैं कि हमारी पार्टी के कार्यकर्ता लोगों की मदद करने, जमीनी स्तर पर बदलाव लाने और उनके भरोसे का समान रूप से समर्थन करने के लिये सशक्त हों। यहां तक कि, जिला स्तर से लेकर महत्वपूर्ण पदों तक पहुंचने वाले कार्यकर्ताओं के विकास में भी यह परिलक्षित होता है, जहां वे पहले से कहीं ज्यादा बड़े पैमाने पर असर पैदा करने में सक्षम हैं। ये कोई लुभावने नारों में लिपटे हुए तड़क-भड़क वाले सिद्धांत नहीं हैं। बल्कि, ये वे सिद्धांत हैं, जो प्रभावी शासन के लिए महत्वपूर्ण हैं।[20]

संदर्भ

1. Definition of decentralization (विकेन्द्रीकरण की परिभाषा) Archived 2011-09-24 at the Wayback Machine (अंग्रेज़ी में), द फ्री डीक्शनरी डॉट कॉम, अभिगमन तिथि: २१ फ़रवरी २०१५
2. ↑ Definition of decentralization (विकेन्द्रीकरण की परिभाषा) Archived 2012-01-26 at the Wayback Machine (अंग्रेज़ी में), मेरियम वेबस्टर, अभिगमन तिथि: २१ फ़रवरी २०१५
3. ↑ "Decentralization: A Sampling of Definitions" [विकेंद्रीकरण: परिभाषाओं का एक नमूना] (PDF) (अंग्रेज़ी में). यूनाइटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम. पृ° १, ३-६. मूल (पीडीएफ) से 12 मई 2012 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 21 फ़रवरी 2011. In fact, a quick review of the literature shows that there is no common definition or understanding of decentralization, although much work has gone into exploring its differing applications
4. रीप्रिंट द इसेंसियल गाँधी: एन एन्थॉलजी ऑफ हिज राइटिंग्स ओन हिज लाइफ, वर्क ऐंड आइडियाज Archived 2007-07-02 at the Wayback Machine., लुइस फिशर, संपा., २००२ (रिप्रिंट संस्करण) पृ. १०६–१०८.
5. ↑ रीप्रिंट द इसेंशियल गाँधी: एन एंथॉलजी ऑफ हिज राइटिंग्स ओन हिज लाइफ, वर्क ऐंड आइडियाज Archived 2007-07-02 at the Wayback Machine.लुई फिशर, संपा., २००२ (रीप्रिंट संस्करण) पृ. ३०८–९.
6. गोखले के धर्मादा, सत्य के साथ मेरे प्रयोग, एम के गाँधी
7. ↑ रोलेट बिल्स और मेरी दुविधा, सत्य के साथ मेरे प्रयोग, एम् के गाँधी
8. ↑ टाइम मैगजीन पीपुल ऑफ़ द सेंचुरी
9. ↑ द स्टोरी ऑफ़ माय एक्सपेरिमेंट्स विथ ट्रुथ — एक आत्मकथा,p १७६
10. ↑ द स्टोरी ऑफ़ माय एक्सपेरिमेंट्स विथ ट्रुथ — एक आत्माकथा, p १७७
11. ↑ द स्टोरी ऑफ़ माय एक्सपेरिमेंट्स विथ ट्रुथ — एक आत्मकथा ,p१८३
12. ↑ महात्मा गांधी के विचार, सं०- आर० के० प्रभु एवं यू० आर० राव, नेशनल बुक ट्रस्ट, नयी दिल्ली, संस्करण-2005, पृ०-88.

ISSN: 2319 – 8753
International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

13. ↑ महादेव देसाईअनाशक्तियोग : द गोस्पेल ऑफ़ सेल्फ्लेस एक्सन, या द गीता अकोर्डिंग तू गाँधी .नवजीवन प्रकाशन घर; अहमदाबाद (प्रथम संस्करण १९४६).अन्य संस्करण; १९४८, १९५१, १९५६.
14. ↑ देसाई की अतिरिक्त कमेन्ट्री के एक बड़े भागी को काटने के बाद एक छोटा संस्करण अनाशक्तियोग : द गोस्पेल ऑफ़ सेल्फ्लेस एक्सन के रूप में प्रकाशित किया गया। जिम रंकिन,सम्पादक. लेखक एम् के की सूची में आते हैं गाँधी; अनुवादक महादेव देसाई (ड्राई बोनस प्रेस, सन फ्रांसिस्को, १९९८) ISBN १ - ८८३९३८ - ४७ ३
15. ↑ सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड-21, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, संस्करण-1967, पृष्ठ-489.
16. ↑ सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड-39 (आत्मकथा), प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, संस्करण-1996, पृष्ठ-109.
17. ↑ सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड-57, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, संस्करण-1974, पृष्ठ-48,50.
18. ↑ सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड-57, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, संस्करण-1974, पृष्ठ-56.
19. ↑ महात्मा और कवि, सव्यसाचि भट्टाचार्य, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, संस्करण-2005, पृष्ठ-158-159.
20. ↑ सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड-57, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, संस्करण-1974, पृष्ठ-179.